(2008)3एस.सी.आर. 1124

भारत कोकिंगकोल लिमिटेड।

बनाम

एम/एस. अन्नपूर्णा कंस्ट्रक्शन

(1997 की सिविल अपील संख्या 5647-5648

में 2005 की आई.ए. संख्या 1-2,)

5 मार्च, 2008

[एस.बी., सिन्हा और वी.एस. सिरपुरकर, जे.जे.]

मध्यस्थता अधिनियम, 1940- एस. 2/सी) - मध्यस्थ द्वारा एक अधिनिर्णय दाखिल करना - उपयुक्त न्यायालय - तथ्यों पर, नियुक्त मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपास्तकर दिया गया क्योंकि, मध्यस्थ ने अनुबंध के प्रासंगिक खंड पर विचार नहीं किया - एक अन्य मध्यस्थ नियुक्त किया गया] जिसने एक अधिनिर्णय पारित किया -पक्षकारगण इस पर सहमत हैं।अधिनिर्णय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष दायर किया जाना चाहिए - हालाँकि, उनमें से एक की आपत्ति - अपील पर, निर्णित: सर्वोच्च न्यायालय ने मध्यस्थ की कार्यवाही पर कोई नियंत्रण नहीं रखा है और नहीं रख सकता है - अधिनिर्णय अपेक्षित क्षेत्राधिकार वाले न्यायालय के समक्ष दायर किया जाना चाहिए - इसके अलावा, क्षेत्राधिकार धारा 11(6) के तहत प्रयोग नहीं किया गया - पक्षकार गण की सहमति से भी, इस न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार नहीं माना जा सकता है, इस प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय के पास आवेदनों पर विचार करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं है - मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 एस। 11(6)

प्रतिवादी और अपीलकर्ता ने एक अनुबंध किया। पक्षों के बीच विवाद उत्पन्न हो गया. मध्यस्थता समझौता लागू किया गया था. एक मध्यस्थ नियुक्त किया गया जिसने प्रतिवादी के पक्ष में फैसला सुनाया। उक्त अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाने की कार्यवाही से उत्पन्न मामला इस न्यायालय के समक्ष आया। इस न्यायालय ने विवादित दावों को किसी अन्य मध्यस्थ के पास भेजने के फैसले को अपास्तकर दिया क्योंकि मध्यस्थ अनुबंध के कुछ प्रासंगिक खंडों पर विचार करने में विफल रहा। दावे उस मध्यस्थ के समक्ष उठाए गए जिसने एक निर्णय पारित किया। इससे पहले कि मध्यस्थ पक्ष इस बात पर सहमत हुए कि अधिनिर्णय इस न्यायालय के समक्ष दायर किया जाएगा। हालाँकि, अपीलकर्ता ने आवेदन दायर की।

मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के तहत दायर आपत्तियों पर विचार करने के लिए इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर सवाल उठा रहा है।

आवेदनों का निपटारा करते हुए, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया :

1.1 जब भी किसी शब्द को किसी क़ानून के तहत परिभाषित किया गया है, तो उसे आम तौर पर लागू किया जाना चाहिए।हालाँकि, इसमें कोई भी संदेह नहीं हो सकता है कि व्याख्या खंड को "जब तक कि विषय और संदर्भ में कुछ भी प्रतिकूल न हो" शब्दों से पहले पेश किया जा रहा है, दी गई स्थितियों में इस न्यायालय को यह राय देनी पड़ सकती है कि विधायिका एक अलग अर्थ का इरादा रखती है।[पैरा 8] [1129-सी-डी]

महाराष्ट्र राज्य इंडियन मेडिकल एसोसिएशन और अन्य। 2002 (1) एससीसी 589; पांडे एंड कंपनी बिल्डर्स (पी) लिमिटेड बनामबिहार राज्य और अन्य. 2007 (1) एस.सी.सी.467-पर भरोसा किया गया।

1.2 ऐसे प्रश्न का निर्धारण करते समय, अदालत को आम तौर पर अपील को प्राथमिकता देने के लिए एक पक्ष के अधिकार को संरक्षित करना चाहिए। अपील का अधिकार एक मूल्यवान अधिकार है और जब तक कोई ठोस कारण मौजूद न हो, किसी वादी को इससे वंचित नहीं किया जाना चाहिए। यह एक वैधानिक अधिकार है. आमतौर पर, हालांकि इसके विपरीत मामले भी हो सकते हैं, यह सिद्धांत लागू किया जाना चाहिए कि अपील का अधिकार छीना नहीं जाना चाहिए। वादी को अपील के अधिकार से वंचित करने का मजबूत कारण हो सकता है। [पैरा 9 और 16][1129-ई-एफ; 1133-जी]

2.1 तत्काल मामले में, मामला इस न्यायालय के समक्ष आया जहां एक मध्यस्थ पहले ही नियुक्त किया जा चुका था और एक अधिनिर्णय दिया जा चुका था। विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि अनुबंध का निर्माण प्रश्न में था, उक्त अधिनिर्णय को अपास्त करते हुए इस न्यायालय द्वारा एक मध्यस्थ नियुक्त किया गया था। न्यायालय ने मध्यस्थ की कार्यवाही पर कोई नियंत्रण नहीं रखा और न ही रख सकता है।इस प्रकार, ऐसे मामले में एक अंतर को ध्यान में रखा जाना चाहिए जहां इस न्यायालय का कार्यवाही पर कोई नियंत्रण नहीं था और जिस मामले में मध्यस्थ की कार्यवाही का नियंत्रण बरकरार रखा गया था। पूर्व मामले में, धारा 2{सी) में निहित "न्यायालय" शब्द की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की, अधिनिर्णय को उस अदालत के समक्ष दायर किया जाना चाहिए जिसके पास तद्परीअपेक्षित क्षेत्राधिकार है।[पैरा 12 और 13][1132-डी-एफ]

2.2 यह ऐसा मामला भी नहीं है जहां इस न्यायालय ने मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 की उप-धारा (6) के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग किया है। अधिकार क्षेत्र के प्रश्न के रूप में एक न्यायालय शामिल है, पक्षकारो की सहमति से भी, इस न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार नहीं माना जा सकता है। इसलिए, इस न्यायालय के पास इन आवेदनों पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। रजिस्ट्री काअभिलेख को जिला न्यायाधीश द्वारा, धनबाद की अदालत में भेजने का निर्देश दिया जाता है, जिसके बदले में मामले को उचित क्षेत्राधिकार वाली अदालत में स्थानांतरित करने का निर्देश दिया जाता है। [पैरा 20, 21 और 22] [1135-एच; 1136-बी-डी]

मध्य प्रदेश राज्य बनाम मैसर्ससैथ एंड स्केल्टन (पी) लिमिटेड 1972 (1) एस.सी.सी702; मेसर्स गुरु नानक फाउंडेशन बनाम मैसर्सरतन सिंह एंड संस 1981 (4) एस.सी.सी634; नेशनल एल्युमीनियम कंपनी लिमिटेड बनाम प्रेसटील एंड फैब्रिकेशंस (पी) लिमिटेड और अन्य। 2004 (1) एस.सी.सी 540; गोवा राज्य बनाम वेस्टर्नबिल्डर्स 2006(6) एस.सी.सी 239; मेसर्स भारत कोकिंगकोल लिमिटेड बनाम एच.पी. बिस्वास एंड

कंपनी का फैसला सर्वोच्च न्यायालय ने 22.08.1997 को 1992 की सिविल अपील संख्या 3504 में दिया था; गढ़वाल मंडल विकास निगम लिमिटेड बनाम मैसर्स कृष्णा ट्रैवल एजेंसी आई.ए1 और 2एस.एल.पी (सी) नंबर 18344 का 2004, दिनांक 24.01.2007 के में; मैक्डरमोट इंटरनेशनल आई.एन.सी. बनाम बर्नस्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड और अन्य 2005 (10) एस.सी.सी353; आई.टी.सी लिमिटेड बनाम जॉर्ज जोसेफ फर्नांडीस और अन्य 2005 (10) एससीसी425 - संदर्भित।

'मध्यस्थता, सुलह और मध्यस्थता' श्री वी.ए. मोहता द्वारामोहता द्वितीयइडन.पृष्ट28 का उल्लेख है।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: एलए. 1997 की सिविल अपील संख्या 5647-5648 में संख्या 1-2/2005।

अपीलकर्ता की ओर से अजीत कुमार सिन्हा और आभास परिमल।

एस.बी. प्रतिवादी की ओर से उपाध्याय, संतोष मिश्रा, पान उपाध्याय, शिवमंगल शर्मा और शर्मिला उपाध्याय।

न्यायालय का निर्णय एस.बी. द्वारा सुनाया गया।

एस.बी.सिन्हा, जे. 1. मध्यस्थ द्वारा अधिनिर्णय दाखिल करने के उद्देश्य से कौन सा न्यायालय उपयुक्त होगा, यह यहां प्रश्न शामिल है।

2. उक्त प्रश्न निम्नलिखित परिस्थितियों में उठता है:

यहां प्रतिवादी ने स्वीकार किया कि वह अपीलकर्ता का ठेकेदार था। पक्षकारो के बीच विवाद और मतभेद उत्पन्न होने पर मध्यस्थता समझौते को लागू किया गया था। एक मध्यस्थ नियुक्त किया गया.

पक्षकार गण ने मध्यस्थ के समक्ष अपने दावे और प्रतिदावे उठाए। उन्होंने प्रतिवादी के पक्ष में 18,97,729,37 रुपये का अधिनिर्णय दिया।

3. कानून का एक प्रश्न तब उठाया गया जब उक्त अधिनिर्णय को न्यायालय का नियम बनाने की कार्यवाही से उत्पन्न मामला अंततः न्यायालय के समक्ष आया, और इस न्यायालय ने अपने निर्णय दिनांक 29.08.2003 में चूंकि (2003 में रिपोर्ट किया गया) 8 एस.सी.सी154, अधिनिर्णय को अलग रखते हुए निर्देशित किया:

"40 हालांकि, जैसा कि यहां पहले देखा गया है, यह मामला एक अलग आधार पर खड़ा है, अर्थात्, कुछ वस्तुओं के संबंध में अधिनिर्णय पारित करते समय मध्यस्थ अनुबंध के प्रासंगिक खंडों पर विचार करने में विफल रहा और/या उद्देश्य से प्रासंगिक सामग्रियों पर विचार उपेक्षा की, न ही सही तथ्य पर पहुंचने के सुसंगत अनुच्छेद को विचारण लेने में किया। ऐसा आदेश कानून को गलत दिशा देने जैसा होगा।

41. इसलिए, हमारी राय है कि मामले पर पुनर्विचार की आवश्यकता है। इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मामला दस्तावेज़ की शुद्ध निर्वचन से संबंधित है जो कानून के प्रश्न को जन्म देता है और मामले को नामित मध्यस्थ को सौंपने के स्थान पर, हम निर्देश दें कि दावा मद 3, 7 और 11 के संबंध में विवादों को माननीय न्यायमूर्ति श्रीडी.एन.प्रसाद,झारखंड उच्च न्यायालय के सेवानिवृत्त न्यायाधीश हैं, के पास

ऐसे नियम और शर्तें जिन पर पक्षकारो द्वारा परस्पर सहमति हो सकती है, निर्देशित किया । विद्वान मध्यस्थ से अनुरोध है कि वह इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मामला लंबे समय से लंबित है, अपना निर्णय यथाशीघ्र देने की वांछनीयता पर विचार करें।''

4. विद्वान मध्यस्थ के समक्ष, प्रतिवादी द्वारा तीन दावे उठाए गए थे, अर्थात, दावा मद संख्या 3, 7 और 11. दावा मद संख्या 3 अतिरिक्त वस्तुओं से संबंधित है जिसे अस्वीकार कर दिया गया है। प्रतिवादी ने 27,77,714/- रुपये का दावा किया है। 12,20,289/- रुपये का अधिनिर्णय दिया गया था। जहां तक दावा मद संख्या 11 का संबंध है, जो कि सामग्री की वृद्धि से संबंधित है, ऐसा प्रतीत होता है कि मध्यस्थ पक्षों के समक्ष 90,005/- रुपये का अधिनिर्णय दिया गया था इस बात पर सहमत हुए कि अधिनिर्णय इस न्यायालय के समक्ष दायर किया जाएगा।

हालाँकि, अपीलकर्ता द्वारा एक आपत्ति दायर की गई है जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ मध्यस्थता अधिनियम, 1940 (संक्षेप में "1940 अधिनियम") के तहत दायर आपत्ति पर विचार करने के इस न्यायालय के अधिकार क्षेत्र पर सवाल उठाया गया है।

5. निर्विवाद रूप से, 1940 का अधिनियम इस मामले में लागू होगा।

6. 1940 अधिनियम की धारा 2(सी) इस प्रकार पढ़ी गई:

"2. इस अधिनियम में, विषय या संदर्भ में कुछ भी प्रतिकूल है,

*** *** ***

"न्यायालय' का अर्थ है एक सिविल न्यायालय जिसके पास संदर्भ की विषय-वस्तु बनाने वाले प्रश्नों का निर्णय करने का अधिकार क्षेत्र है यदि वही है एक वाद का विषय-वस्तु था, लेकिन धारा 21 के तहत मध्यस्थता कार्यवाही के उद्देश्य को छोड़कर इसमें लघु वाद न्यायालय शामिल नहीं है;"

7. हालांकि सख्ती से, यह आवश्यक नहीं है लेकिन हम इसकी परिभाषा में बदलाव को भी देख सकते हैं संसद द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 में धारा 2(1)(ई) में निहित शब्द "न्यायालय" को इस प्रकार लाया गया है:

"2. (1) इस भाग में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, -

*** *** ***

(ई) "न्यायालय" का अर्थ किसी जिले में मूल क्षेत्राधिकार का प्रधान सिविल न्यायालय है, और सामान्य मूल सिविल क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए न्यायालय भी शामिल है जिसमें मध्यस्थता के विषय-वस्तु को बनाने वाले प्रश्नों को तय करने का क्षेत्राधिकार होता है, यदि वह किसी वाद का विषय-वस्तु रहा हो, लेकिन इसमें ऐसे प्रधान सिविल कोर्ट से निम्न श्रेणी का कोई भी सिविल न्यायालय शामिल नहीं है, या लघु वादों का कोई भी न्यायालय;

8. अब यह एक घिसा-पिटा कानून है कि जब भी किसी क़ानून के तहत कोई शब्द परिभाषित किया गया है, तो सामान्यतः उसी को लागू किया जाना चाहिए।हालाँकि, इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि व्याख्या खंड को "जब तक कि विषय और संदर्भ में कुछ भी प्रतिकूल न हो" शब्दों से पहले पेश किया

जा रहा है, दी गई स्थितियों में इस न्यायालय को यह राय देनी पड़ सकती है कि विधायिका एक अलग अर्थ का इरादा रखती है। (महाराष्ट्र राज्य बनाम इंडियन मेडिकल एसोसिएशन और अन्य (2002) 1एससीसी589 और पांडे एंड कंपनी बिल्डर्स (पी) लिमिटेड बनाम बिहार राज्य और अन्य (2007) 1 एस.सी.सी 457]

9 देखें। ऐसे प्रश्न का निर्धारण करते समय, न्यायालय को आम तौर पर किसी पक्ष के अपील करने के अधिकार को सुरक्षित रखना चाहिए। अपील का अधिकार एक मूल्यवान अधिकार है और जब तक कोई ठोस कारण मौजूद न हो, वादी को इससे वंचित नहीं किया जाना चाहिए।

10. उपरोक्त पृष्ठभूमि के साथ, हम इस क्षेत्र में चल रही कुछ उदहारण पूर्व न्याय को देख सकते हैं।

मध्य प्रदेश राज्य बनाम मैसर्स में। सैथ एंड स्केल्टन (पी) लिमिटेड [(1972) 1एससीसी702], मध्यस्थ की नियुक्ति के अलावा, इस न्यायालय ने निर्णय देने का समय भी बढ़ा दिया। यह माना गया कि यह न्यायालय 1940 अधिनियम की धारा 30 के साथ पठित धारा 14(2) के तहत एक आवेदन पर विचार करने का हकदार होगा:

"18. श्री श्रॉफ के अनुसार अधिनिर्णय

इस न्यायालय में नहीं, बल्कि अतिरिक्तजिला न्यायाधीश, मंदसौर, न्यायालय में दाखिल की गईं, क्योंकि वह न्यायालय है जिसके पास संदर्भ की विषय-वस्तु के संबंध में वाद पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र होगा। हम श्री श्रॉफ के इस तर्क को स्वीकार करने के इच्छुक नहीं हैं। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि धारा 2 के शुरुआती शब्द हैं "इस अधिनियम में, जब तक कि विषय या संदर्भ में कुछ भी प्रतिकूल न हो"। इसलिए अभिव्यक्ति "न्यायालय को अधिनियम की धारा 2(सी) में परिभाषित के रूप में समझा जाना चाहिए, केवल तभी जब विषय या संदर्भ में कुछ भी प्रतिकूल न हो। यह उस प्रकाश में है कि अभिव्यक्ति" न्यायालय धारा 14(2) में घटित होती है। को अधिनियम को समझना और व्याख्या करना होगा। यह वह न्यायालय था जिसने श्री वी.एस. देसाईको अधिनिर्णय बनाने केलिएनियुक्त किया था। दिनांक 29 जनवरी, 1971 को देसाई ने पक्षकारो की सहमति से मध्यस्थ के रूप में यह देखा जाएगा कि उक्त आदेश में कोई और निर्देश नहीं दिए गए थे जो यह संकेत देगा कि इस न्यायालय ने अधिनिर्णय या अधिनिर्णय से उत्पन्न होने वाले मामलों से निपटने के लिए अपने अधिकार क्षेत्र से खुद को अलग नहीं किया है। दरअसल संकेत इसके उलट हैं. 29 जनवरी 1971 के आदेश में निर्देश यह है कि मध्यस्थ को "अपना अधिनिर्णय देना होगा"। निश्चित रूप से कानून अधिनिर्णय दिए जाने के बाद आगे उठाए जाने वाले कदमों पर अनुध्यात करता है, और स्वाभाविक रूप से आगे की कार्रवाई करने का फोरम केवल यही न्यायालय है। इस आशय का भी निर्देश था कि पक्षकार गण अधिनिर्णय देने के लिए समय के विस्तार के लिए आवेदन करने के लिए स्वतंत्र हैं। आदेश द्वारा किसी अन्य न्यायालय को इस तरह का अधिकार क्षेत्र दिए जाने की अनुपस्थिति में, एकमात्र निष्कर्ष जो संभव है वह यह है कि ऐसा अनुरोध केवल उस न्यायालय से किया जाना चाहिए जिसने उस आदेश को पारित किया है, अर्थात्, इस न्यायालय से।"

इसके साथसंप्रेषित किया गया :

"21. सीटी. ए. सीटी. नचियप्पाचेट्टियार बनाम सीटी. ए. सीटी में.सुब्रमण्यमचेट्टियार ने सवाल उठाया कि क्या विचारण न्यायालय के पास किसी मुकदमे की विषय-वस्तु को मध्यस्थ के पास भेजने का अधिकार क्षेत्र है, जब वादमें जय पत्र उच्च न्यायालय के समक्ष अपील के लिए लंबित थी। धारा 21 के आधार पर, इस न्यायालय के समक्ष यह आग्रह किया गया था कि विचारण न्यायालय द्वारा किया गया संदर्भ, जब अपील लंबित थी, और ऐसे संदर्भ के परिणामस्वरूप दिया गया अधिनिर्णय, दोनों अमान्य थे क्योंकि विचारण न्यायालय संदर्भ का आदेश देने के लिए सक्षम नहीं था। इस न्यायालय ने उक्त तर्क को अस्वीकृत कर दिया और अधिनियम की धारा 2 (सी) और 21 के संदर्भ के बाद अभिनिर्धारित किया कि धारा 21 में होने वाली अभिव्यक्ति "न्यायालय" में अपीलीयन्यायालय भी शामिल है, जिसके समक्ष कार्यवाही वाद की निरंतरता है। यह था आगे माना गया कि धारा 21 में "वाद" शब्द में अपीलीय कार्यवाही भी शामिल है, उपरोक्त निर्णय की सादृश्यता को लागू करते हुए, अधिनियम की धारा 14(2) में आने वाली अभिव्यक्ति "न्यायालय" को समझना होगा। जिस संदर्भ में यह होता है। तो समझा जाता है, यह इस प्रकार है कि यह न्यायालय धारा 14(2) के तहत न्यायालय है जहां मध्यस्थता अधिनिर्णय वैध रूप से दायर किया जा सकता है।"

11. उक्त सिद्धांत को मैसर्स में दोहराया गया था। गुरु नानक [फाउंडेशन बनाम एम/एस. रतन सिंह एंड संस [(1981) 4एससीसी634] जिसमें यह राय दी गई थी:

"18...अपील में इस न्यायालय के विनिश्चय से दूसरे प्रतिवादी को मध्यस्थ के रूप में हटा दिया गया था और तीसरे प्रतिवादी को एकमात्र मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया गया था। इसलिए, निर्विवाद रूप से, मध्यस्थ को इस न्यायालय द्वारा नियुक्त किया गया था। तीसरे प्रतिवादी को नियुक्त करने का आदेश मध्यस्थ ने एक और निर्देश दिया कि मध्यस्थ न्यायालय के आदेश की तारीख से 15 दिनों के भीतर संदर्भ में प्रवेश करेगा और उसे यथासंभव शीघ्रता से निपटाने का प्रयास करना चाहिए। अंतिम आदेश यह था कि अपील का निपटारा ऊपर दी गई इंगित शर्तों पर कर दिया गया था।यह तर्क कि उसके बाद यह न्यायालय इस मामले पर विचार नहीं कर रहा था, इस तथ्य पर भरोसा करते हुए आग्रह किया गया था कि अपील का निपटारा न्यायालय के आदेश द्वारा किया गया था और इस न्यायालय के समक्ष आगे कोई कार्यवाही नहीं हुई थी। इस विवाद को केवल अस्वीकार करने के लिए कहा जाना चाहिए, जैसा कि वर्तमान में बताया जाएगा। अपील के निपटारा के बाद, 1977 का सी.एम.पी नंबर 896 न्यायालय के आदेश के स्पष्टीकरण और/या संशोधन के लिए इस न्यायालय में प्रस्तुत किया गया था। दिनांक 5 जनवरी 1977 इस न्यायालय ने 10 फरवरी 1977 के अपने आदेश द्वारा आगे के निर्देश दिए और इस न्यायालय द्वारा एक विशिष्ट समय-सीमा तय की गई जिसमें मध्यस्थ के रूप में तीसरे प्रतिवादी को न्यायालय के आदेश की तारीख से चार महीने के भीतर कार्यवाही समाप्त करने का निर्देश दिया गया।यहां तक कि कार्यवाही के संचालन के संबंध में भी इस न्यायालय ने निर्देश दिया कि तीसरे प्रतिवादी को उस चरण से संदर्भ के साथ आगे बढ़ना चाहिए जहां इसे दूसरे प्रतिवादी ने छोड़ा था और न केवल वह अतिरिक्त सबूत पेश करने की अनुमति दे सकता है बल्कि उसे दलीलों तथा साक्ष्य जो भी

पिछले मध्यस्थ के समक्ष पहले ही रखे जा चुके हैं,विचार करना चाहिए। यह निर्विवाद रूप से दिखाएगा कि इस न्यायालय का मध्यस्थ के समक्ष कार्यवाही पर पूर्ण नियंत्रण था।"

12. उपरोक्त दोनों निर्णय, इसलिए, इस आधार पर आगे बढ़ते हैं कि न्यायालय कामध्यस्थ की कार्यवाही पर पूर्ण नियंत्रण था। तत्काल मामले में, हालाँकि, यह मामला इस न्यायालय के समक्ष आया, जहाँ एक मध्यस्थ पहले ही नियुक्त किया जा चुका था और एक अधिनिर्णय दिया जा चुका था, विशेष रूप से इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रश्नगतअनुबंध का निर्माण चल रहा था, उक्त अधिनिर्णय को अपास्तकरते हुए एक मध्यस्थ नियुक्त किया गया था। न्यायालय ने मध्यस्थ की कार्यवाही पर कोई नियंत्रण नहीं रखा और न ही रख सकता है।

13. इस प्रकार, उस मामले में एक अंतर को ध्यान में रखा जाना चाहिए जहां इस न्यायालय का कार्यवाही पर कोई नियंत्रण नहीं था और जिस मामले में मध्यस्थ की कार्यवाही का नियंत्रण बरकरार रखा गया था। पहले मामले में, 1940 अधिनियम की धारा 2(सी) में निहित "न्यायालय" शब्द की परिभाषा को ध्यान में रखते हुए, अधिनिर्णय उस अदालत के समक्ष दायर किया जाना चाहिए जिसके पास तद्परीअपेक्षित क्षेत्राधिकार है।

14. हम अन्केक्षा कर सकते हैं कि इस न्यायालय द्वारा नेशनल एल्युमीनियम कंपनी लिमिटेड बनाम प्रेसटील एंड फैब्रिकेशंस (पी) लिमिटेड और अन्य [(2004)1एससीसी540) में ऐसा दृष्टिकोण अपनाया गया है:

"9..उस फोरम के संबंध में जिसके समक्ष संशोधन या अधिनिर्णय को अपास्तकरने के लिए आवेदन का संबंध है, हमें इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई कठिनाई नहीं है कि इसके मद्देनजर धारा 34 के प्रावधानों स्वपठित 1996 अधिनियम की धारा 2(ई) का यह न्यायालय नहीं है जिसके पास अधिनिर्णय में संशोधन के लिए एक आवेदन पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र है और यह केवल मूल क्षेत्राधिकार के प्रधान व्यवहार न्यायालय जैसा कि अधिनियम की धारा 2(ई) के तहत अनुध्यात किया गया है, इसलिए, हमारी राय में, यह आवेदन इस न्यायालय के समक्ष विचारणीय नहीं है।"

15. एक बार फिर गोवा राज्य बनाम वेस्टर्नबिल्डर्स [(2006) 6एससीसी239] में ,इसन्यायालय ने राय दी:

"21. नेशनल एल्युमीनियम कंपनी लिमिटेड बनाम प्रेसस्टील एंड फैब्रिकेशंस (पी) लिमिटेड में मध्यस्थता अधिनियम, 1940 के तहत मध्यस्थ की एकतरफा नियुक्ति को चुनौती दी गई थी।इस न्यायालय ने उक्त अपील में पक्षों को सुनने के बाद एक एकमात्र मध्यस्थ नियुक्त किया। एकमात्र मध्यस्थ के समक्ष दोनों पक्ष सहमति से रजामंद हुए कि कार्यवाही मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 के प्रावधानों द्वारा शासित होनी चाहिए। मध्यस्थ उस आधार पर आगे बढ़ा और अंतिम अधिनिर्णय दिया। उस अंतिम अधिनिर्णय को चुनौती दी गई थी। प्रश्न यह उठा कि क्या कार्यवाही 1940 अधिनियम द्वारा शासित होगी या 1996 अधिनियम द्वारा उपयुक्त न्यायालय कौन सा है. यह विवाद करीब 16 साल तक चला। इस न्यायालय ने अपील को खारिज कर दिया और अभिनिर्धारित किया कि वर्तमान मामले में कार्यवाही अधिनियम, 1996 के प्रावधानों के तहत चलनी चाहिए, हालांकि विवाद अधिनियम, 1996 के लागू होने से

पहले उत्पन्न हुआ था, धारा 34 के तहत अधिनिर्णय को चुनौती देने के लिए उपयुक्त फोरम था अधिनियम, 1996 की धारा 2(ई) के तहत विचार के अनुसार मूल क्षेत्राधिकार का प्रधान सिविल न्यायालय।"

16.आमतौर पर, हालांकि इसके विपरीत मामले हो सकते हैं, सिद्धांत यह है कि अपील का अधिकार नहीं छीना जाना चाहिए, प्रयुक्त होना चाहिए। वादी को अपील के अधिकार से वंचित करने का मजबूत कारण हो सकता है।

17. पांडे एंड कंपनी बिल्डर्स (पी) लिमिटेड (सुप्रा) में, हालांकि, उससे प्राप्त तथ्यात्मक स्थिति में, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारितकिया :

"23. इस मामले में, हमारे लिए इस प्रश्न पर जाना जरूरी नहीं है कि क्या 1996 अधिनियम की धारा 37 की उप-धारा (3) उप-धारा के तहत पारित अपीलीय आदेश से अपील को रोक देगी (2) इसकी धारा 37 के। वैधानिक प्रतिबंध के परिणाम सामने आएंगे लेकिन तब इस प्रश्न पर विचार करना होगा जब 1996 अधिनियम की धारा 37 की उप-धारा (2) अपील के लिए निर्धारित करती है एक अदालत। हमें इसका कोई कारण नहीं दिखता कि इसकी स्पष्ट भाषा को ध्यान में रखते हुए, "अदालत" की परिभाषा को सेवा में क्यों नहीं लाया जाएगा। यह सच हो सकता है कि व्याख्या खंड "जब तक संदर्भ में अन्यथा आवश्यक न हो" का प्रावधान करता है। यदि 1996 अधिनियम की धारा 2 में निहित व्याख्या खंड के आवेदन से असाधारण और बेतुके परिणाम सामने आएंगे, तो कोई भी परिभाषा पर कायम नहीं रह सकता है, लेकिन हम नहीं सोचते है कि ऐसा कोई मामला बनाया गया है।"

18. इस न्यायालय केमेसर्सभारत कोकिंगकोल लिमिटेडबनाम एच.पी. बिस्वास एंड कंपनी [1992 की सिविल अपील संख्या 3504] में दिनांक 22.08.1997 के आदेश पर अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अजीत कुमार सिन्हा द्वारा भी भरोसा रखा गया है। जिसमें यह निर्देशित किया गया था:

"इस सिविल अपील में विचारण न्यायालय के समक्ष मध्यस्थता अधिनियम की धारा 8 से उत्पन्न कार्यवाही में इस न्यायालय द्वारा नियुक्त मध्यस्थ द्वारा एक अधिनिर्णय दायर किया गया है।हालाँकि, चूँकि अपील विचारण न्यायालय के समक्ष उपरोक्त धारा के तहत कार्यवाही से उत्पन्न हुई है, इस न्यायालय द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति विचारण न्यायालय द्वारा पारित पहले के आदेश के प्रतिस्थापन में थी। इसलिए उपयुक्त अदालत जिसमें अधिनिर्णय दायर किया जाना है वह प्रथम अवर-न्यायाधीश, धनबाद की अदालत होगी। इसलिए, रजिस्ट्री को मूल अधिनिर्णय के साथ-साथ संपूर्ण अभिलेख प्रथम अवर-न्यायाधीश, धनबाद, बिहार को भेजने का निर्देश दिया जाता है।विचारण न्यायालय द्वारा इस आदेश की प्रति, मूल अधिनिर्णय और अभिलेख प्राप्त होने पर, विचारण न्यायालय द्वारा संबंधित पक्षों को नोटिस जारी किया जाएगा और ऐसे नोटिस की प्राप्ति के 30 दिनों के भीतर धारा 30 के तहत आपत्ति, यदि कोई हो,।

मध्यस्थता अधिनियम संबंधित आपत्तिकर्ता द्वारा दायर किया जाएगा।इसके बाद विचारण न्यायालय कानून के अनुसार अग्रतरकी कार्रवाई करेगा। विचारण न्यायालय अधिनिर्णय को अदालत का नियम बनाने के अनुरोध पर संबंधित पक्षों की आपत्तियों, यदि कोई हो, पर निर्णय करेगा। विचारण न्यायालय जल्द से जल्द कार्यवाही व्ययन करेगा, अधिमानतः कि आज से छह महीने की अवधि के भीतर...

19. इसी तरह की राय हाल ही में गढ़वाल मंडल विकास निगम लिमिटेड बनाम मैसर्स मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा दी गई थी।कृष्णा ट्रैवल एजेंसी [2004 दिनांक 24.01.2007 के एसएलपी (सी) नंबर 18344 में आईए 1 और 2] जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया था:

"इन चार मामलों के अलावा, जो हमारे संज्ञान में लाए गए हैं, कानून की स्थिति बहुत स्पष्ट है कि यदि विद्वान अधिवक्ता के तर्क को स्वीकार कर लिया जाता है, तो इसका मतलब यह होगा कि हर मामले में जहां यह अदालत आदेश पारित करती है, चाहे वह किसी भी मामले में हो। अपील, मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11(6) के तहत उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश से, यह अदालत मूल क्षेत्राधिकार का प्रधान सिविल न्यायालय बन जाएगी यदि तर्क को इसके तार्किक निष्कर्ष तक ले जाया जाए तो इसका मतलब होगा किपक्षकारो को धारा 34 के तहत अधिनिर्णय को अपास्त करने हेतु एक आवेदन देकर इस न्यायालय से संपर्क करना होगा।अधिनियम की धारा 34 में प्रयुक्त अभिव्यक्ति 'न्यायालय' को भी इसमें 'न्यायालय' की परिभाषा को नजरअंदाज करते हुए समझना होगा।समस्या का एक और पहलू भी है. पक्षकार मध्यस्थता और सुलह अधिनियम की धारा 37(i)(6) के तहत अपील दायर करने के अधिकार से वंचित हो जाएगी। इसका मतलब यह है कि अपील का एक मूल्यवान अधिकार खो जाएगा। इसलिए, चीजों की योजना में, विद्वान अधिवक्ता की प्रस्तुति को स्वीकार नहीं किया जा सकता है..."

['मध्यस्थता, सुलह और मध्यस्थता' में टिप्पणियाँ भी देखें, श्री वी.ए. मोहता द्वारा दूसरा संस्करण, पृष्ठ 82]20. यह भी है ऐसा कोई मामला नहीं है जहां इस न्यायालय ने मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 11 की उप-धारा (6) के तहत अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग किया है जैसा कि मैकडरमॉट में किया गया था। इंटरनेशनल इन्क्लेव बनाम बर्नस्टैंडर्ड कंपनी लिमिटेड और अन्य [(2005) 10एससीसी353] इसी तरह का दृष्टिकोण आईटीसी लिमिटेड बनाम जॉर्जजोसेफफर्नांडीस और अन्य [(2005) 10एस.सी.सी425]में लिया गया है।

12. चूँकि इसमें किसी न्यायालय के क्षेत्राधिकार का प्रश्न शामिल है, हमारी राय है कि पक्षकार गण की सहमति से भी, इस न्यायालय द्वारा क्षेत्राधिकार नहीं माना जा सकता है।

22. इसलिए, उपरोक्त कारणों और बाध्यकारी उदाहण पूर्व न्याय से हमारी राय है कि इस न्यायालय के पास इन आवेदनों पर विचार करने का कोई अधिकार क्षेत्र नहीं है। इसलिए, रजिस्ट्री को अभिलेख जिला न्यायाधीश, धनबाद की अदालत को भेजने का निर्देश दिया जाता है, जिसे बदले में मामले को उचित क्षेत्राधिकार वाली अदालत में स्थानांतरित करने का निर्देश दिया जाता है। संबंधित अदालत से अनुरोध

किया जाता है कि अभिलेख प्राप्त होने की तारीख से तीन महीने के पश्चात् न करे। वह अपीलकर्ता द्वारा यहां दायर की गई आपत्ति का यथासंभव शीघ्रता से निपटाराकरे।

23. आवेदनों का निराकरण उपरोक्त निर्देशों के साथ किया जाता है। कोई खर्चा नहीं।

एन.जे.आवेदनों का निपटारा किया गया।

यह अनुवाद किरण शंकर मिश्रा, पैनल अनुवादक द्वारा किया गया है।